अध्याय 7: क्षेत्रीय संस्कृतियों का निर्माण

हम प्रत्येक क्षेत्र को कुछ खास किस्म के भोजन, वस्त्र, काव्य, नृत्य, भाषा, संगीत और चित्रकला से जोड़ते हैं। यह क्षेत्रीय संस्कृतियाँ समय के साथ-साथ बदलती है और आज भी बदल रही है।

- **ये क्षेत्रीय संस्कृतियाँ, स्थानीय परंपराओं और उपमहाद्वीप केअन्य भागों के विचारों के आदान प्रदान से एक-दूसरे को संपन्न बनाती है।**

➡ कुछ परंपराएँ, कुछ विशेष क्षेत्रों की अपनी होती हैं। जबकि कुछ अन्य विभिन्न क्षेत्रों में एक समान प्रतीत होती हैं। इसके अतिरिक्त, कुछ अन्य परंपराएँ खास इलाके के पुराने रीति-रिवाजों से तो निकली है, परंतु अन्य क्षेत्रों में जाकर वह एक नया रूप ले लेती है।

चेर और मलयालम भाषा का विकास

महोदयपुरम (केरल) राज्य 9वीं सदी में स्थापित किया गया। इस इलाके में मलयालम भाषा बोली जाती थी। शासकों ने मलयालम भाषा एवं लिपि का प्रयोग अपने अभिलेखों में किया है।

- इस भाषा का प्रयोग उपमहाद्वीप के सरकारी अभिलेखों में किसी क्षेत्रीय भाषा के प्रयोग का सबसे पहले उदाहरणों में से एक है।
- चेर लोगों ने संस्कृत की परंपराओं (केरल का मंदिर-रंगमंच, जो संस्कृत के महाकाव्यों पर आधारित था) से भी बहुत कुछ ग्रहण किया।
- मलयालम भाषा की पहली साहित्यिक कृतियाँ (लगभग 12वीं सदी), जो प्रत्यक्ष रूप से संस्कृत की ऋणी हैं।
- **14वीं सदी का एक ग्रंथ लीला तिलकम, जो व्याकरण तथा काव्यशास्त्र विषयक है—मणिप्रवालम (हीरा और मूँगा—संस्कृत तथा क्षेत्रीय भाषा) शैली में लिखा गया था।**

शासक और धार्मिक परंपराएँ—जगन्नाथी संप्रदाय

अन्य क्षेत्रों में क्षेत्रीय संस्कृतियाँ, क्षेत्रीय धार्मिक परंपराओं से विकसित हुई थीं। उदाहरण—पुरी, उड़ीसा में जगन्नाथ का संप्रदाय (जगन्नाथ का अर्थ, दुनिया का मालिक जो विष्णु का पर्यायवाची है)।

➡ **आज तक जगन्नाथ की काष्ठ प्रतिमा, स्थानीय जनजातीय लोगों द्वारा बनाई जाती है।** यह स्थानीय देवता थे, जिन्हें आगे चलकर विष्णु का रूप मान लिया गया।

- 12वीं सदी में गंग वंश के राजा अनंतवर्मन ने पुरी में पुरुषोत्तम जगन्नाथ के लिए एक मंदिर बनवाया।
- 1230 में राजा अनंगभीम तृतीय ने अपना राज्य पुरुषोत्तम जगन्नाथ को अर्पित कर दिया और स्वयं को जगन्नाथ का प्रतिनियुक्त घोषित किया।

➡ **मंदिर को तीर्थस्थल के रूप में महत्व प्राप्त होने पर सामाजिक तथा राजनीतिक मामलों में भी इसकी सत्ता बढ़ती गई।** जिन्होंने भी उड़ीसा को जीता, जैसे मुग़ल, मराठे और अँग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कंपनी, सबने स्थानीय जनता में अपना शासन स्वीकार्य करवाने के लिए इस मंदिर पर अपना नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास किया।

Study Learning Notes

राजपूत और शूरवीरता की परंपराएँ

19वीं सदी में ब्रिटिश लोग राजस्थान को राजपूताना कहते थे। परंतु राजस्थान में राजपूतों के अलावा अन्य लोग भी रहते हैं।

➡ अकसर यह माना जाता है कि **राजपूतों ने राजस्थान को एक विशिष्ट संस्कृति प्रदान की।** ये सांस्कृतिक परंपराएँ वहाँ के शासकों के आदर्शों तथा अभिलाषाओं के साथ घनिष्ठता से जुड़ी हुई थीं।

- इसके अलावा उत्तरी तथा मध्यवर्ती भारत के अनेक क्षेत्रों में अपने आपको राजपूत कहने वाले समूह थे और आज भी हैं।

- 8वीं सदी से आज के राजस्थान के अधिकांश भाग पर विभिन्न परिवारों के राजपूत राजाओं का शासन रहा।
- **इनके शासक शूरवीरों के आदर्शों को अपने हृदय में संजोए रखते थे,** जिन्होंने युद्ध के मैदान में बहादुरी से लड़ते हुए मृत्यु को चुना, मगर कभी पीठ नहीं दिखाई।
- **राजपूत शूरवीरों की कहानियाँ काव्यों और गीतों में सुरक्षित हैं ये विशेष रूप से प्रशिक्षित चारण-भाटों द्वारा गाई जाती हैं।**
- साधारण जन भी इन कहानियों से आकर्षित होते थे। **इन कहानियों में अकसर नाटकीय स्थितियों और स्वामीभक्ति, मित्रता, प्रेम, शौर्य, क्रोध आदि भावनाओं का चित्रण होता था।**
- कहीं-कहीं यह चित्रित किया गया है कि स्त्रियाँ अपने शूरवीर पतियों का जीवन-मरण दोनों में साथ देती थीं। जैसे—सती हो जाना।

इस प्रकार जो लोग शूरवीरता के आदर्शों का पालन करते थे, उन्हें अकसर इस आदर्श के लिए अपने जीवन का बलिदान करना होता था।

क्षेत्रीय सीमांतों से परे—कत्थक नृत्य की कहानी

कत्थक शब्द कथा शब्द से निकला है, अर्थ—कहानी। कत्थक मूल रूप से उत्तर भारत के मंदिरों में कथा यानी कहानी सुनाने वालों की एक जाति थी। ये कथाकार अपने हाव-भाव तथा संगीत से अपनी कथावाचन को अलंकृत करते थे।

- **15वीं तथा 16वीं सदी में भक्ति आंदोलन के प्रसार के साथ कत्थक एक विशिष्ट नृत्य शैली का रूप धारण करने लगा।**
- **राधा-कृष्ण की कहानियों को लोक नाट्य के रूप (रासलीला) में** प्रस्तुत किया जाता था। रासलीला में लोक नृत्य के साथ कत्थक कथाकार के मूल हाव-भाव भी जुड़े होते थे।
- **मुगल बादशाहों और उनके अभिजातों के शासनकाल में कत्थक नृत्य राजदरबार में प्रस्तुत किया जाता था।**

➡ नृत्य ने अपने वर्तमान रूप को अर्जित कर एक विशिष्ट नृत्य शैली के रूप में विकसित हो गया। **आगे चलकर यह दो परंपराओं अर्थात घरानों में फूला-फला: राजस्थान (जयपुर) के राजदरबारों में और लखनऊ में। अवध के अंतिम नवाब वाजिदअली शाह के संरक्षण में यह प्रमुख कला-रूप में उभरा।**

- 1850-1875 के दौरान यह नृत्य शैली के रूप में आज के पंजाब, हरियाणा, जम्मू और कश्मीर, बिहार तथा मध्य प्रदेश के निकटवर्ती इलाकों में भी संस्थापित हो गया।
- इसकी प्रस्तुति में क्लिष्ट तथा द्रुत पद संचालन, उत्तम वेशभूषा तथा कहानियों के प्रस्तुतीकरण एवं अभिनय पर ज़ोर दिया जाने लगा।

➡ अनेक अन्य सांस्कृतिक गतिविधियों की तरह कत्थक को भी 19वीं तथा 20वीं सदी में अधिकांश ब्रिटिश प्रशासकों ने नापसंद किया। फिर भी यह जीवित बचा रहा और इसनें छह शास्त्रीय नृत्य रूपों में मान्यता प्राप्त किया।

- **भरतनाट्यम (तमिलनाडु)**
- **कथाकली (केरल)**
- **ओडिसी (उड़ीसा)**
- **कुचिपुड़ि (आंध्र प्रदेश)**
- **मणिपुरी (मणिपुर)**

संरक्षकों के लिए चित्रकला—लघुचित्रों की परंपरा

लघुचित्र छोटे आकार के चित्र होते हैं, जिन्हें आमतौर पर जल रंगों से कपड़े या कागज़ पर चित्रित किया जाता है।

प्राचीनतम लघुचित्र, तालपत्रों अथवा लकड़ी की तख्तियों पर चित्रित किए गए थे। इनमें से सर्वाधिक सुंदर चित्र, जो पश्चिम भारत में पाए गए जैन ग्रंथों को सचित्र बनाने के लिए प्रयोग किए गए थे।

Study Learning Notes
https://studylearningnotes.com

➡ **मुग़ल बादशाह अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने अत्यंत कुशल चित्रकारों को संरक्षण प्रदान किया था,** जो प्राथमिक रूप से इतिहास और काव्यों की पाण्डुलिपियाँ आमतौर पर चटक रंगों में चित्रित करते थे।

- इनमें दरबार के दृश्य, लड़ाई तथा शिकार के दृश्य और सामाजिक जीवन के अन्य पहलू चित्रित किए जाते थे।
- इन चित्रों का उपहार के तौर पर आदान-प्रदान किया जाता था और ये कुछ गिने-चुने लोगों—बादशाह और उनके घनिष्ठ जनों द्वारा ही देखे जा सकते थे।
- मुग़ल साम्राज्य के पतन के साथ अनेक चित्रकार मुग़ल दरबार छोड़कर नए उभरने वाले क्षेत्रीय राज्यों के दरबारों में चले गए।

इस प्रकार मुगलों की कलात्मक रुचियों ने दक्षिण के क्षेत्रीय दरबारों और राजस्थान के राजपूती राजदरबारों को प्रभावित किया। लेकिन इसके साथ ही उन्होंने अपनी विशेषताओं को सुरक्षित रखा और उनका विकास भी किया।

➡ शासकों तथा उनके दरबारों के दृश्य चित्रण के साथ-साथ मेवाड़, जोधपुर, बूंदी, कोटा और किशनगढ़ जैसे केंद्रों में पौराणिक कथाओं तथा काव्यों के विषयों का चित्रण बराबर जारी रहा।

➡ 17वीं सदी के बाद के वर्षों में, आधुनिक हिमाचल प्रदेश के आस-पास हिमालय की तलहटी के इलाके में लघुचित्रकला की एक साहसपूर्ण एवं भावप्रवण शैली का विकास हो गया। जिसे **बसोहली शैली** कहा जाता है। **यहाँ लोकप्रिय पुस्तक "भानुदत्त की रसमंजरी" को चित्रित किया गया था।**

➡ 1739 में नदिरशाह के आक्रमण और दिल्ली विजय के बाद मुग़ल कलाकार, पहाड़ी क्षेत्रों की ओर चले गए। जहाँ कांगड़ा शैली विकसित हुई।

- 18वीं सदी के मध्य तक, कांगड़ा के कलाकारों ने एक नई शैली विकसित कर दी। वैष्णव परंपराएँ उनकी प्रेरणा का स्रोत थी।
- ठंडे नील और हरे रंगों सहित कोमल रंगों का प्रयोग और विषयों का काव्यात्मक निरूपण कांगड़ा शैली की विशेषता थी।

लघुचित्र राजमहलों में सावधानीपूर्वक रखे जाते थे, जिससे वे सदियों तक सुरक्षित रहें। परंतु साधारण स्त्री-पुरुषों द्वारा बनाई गई बर्तनों, दीवारों, कपड़ों, फ़र्श आदि पर कलाकृतियों के कुछ ही नमूने बच पाते थे।

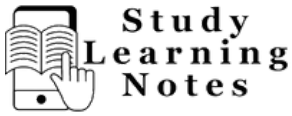

बंगाल—नज़दीक से एक नज़र

एक क्षेत्रीय भाषा का विकास

ईसा पूर्व चौथी-तीसरी सदी से बंगाल और मगध के बीच वाणिज्यिक संबंध स्थापित होने लगे थे, जिसके कारण संभवत: संस्कृत का प्रभाव बढ़ता गया।

➡ **चौथी सदी के दौरान,** गुप्तवंशीय शासकों ने उत्तरी बंगाल पर अपना राजनीतिक नियंत्रण स्थापित कर लिया और वहाँ ब्राह्मणों को बसाना शुरू कर दिया। इस प्रकार गंगा की मध्यघाटी के भाषायी तथा सांस्कृतिक प्रभाव अधिक प्रबल हो गए।

➡ **7वीं सदी में चीनी यात्री ह्यून सांग ने यह पाया कि बंगाल में हर जगह संस्कृत से संबंधित भाषाओं का प्रयोग हो रहा था।**

➡ **8वीं सदी** से पाल शासकों के अंतर्गत एक क्षेत्रीय राज्य का उद्भव हो गया। **14वीं से 16वीं सदी** के बीच बंगाल पर सुल्तानों का शासन रहा, जो दिल्ली में स्थित शासकों से स्वतंत्र थे।

➡ **1586 में अकबर ने बंगाल को जीतकर सूबा बनाया।** उस समय प्रशासन की भाषा तो फ़ारसी थी, लेकिन बंगाली एक क्षेत्रीय भाषा के रूप में विकसित हो रही थी।

➡ 15वीं सदी तक आते-आते उपभाषाओं तथा बोलियों का बंगाली समूह, एक सामान्य साहित्यिक भाषा के द्वारा एकबद्ध हो गया। यह भाषा पश्चिम बंगाल की बोलचाल की भाषा थी। **बंगाली का उद्भव संस्कृत से ही हुआ है, पर यह अपने विकास के दौरान अनेक अवस्थाओं से गुजरी है।**

studylearningnotes.com

➡ इसके अलावा जनजातीय भाषाओं, फ़ारसी और यूरोपीय भाषाओं सहित अनेक स्रोतों से शब्दों का एक विशाल शब्द भंडार इसे प्राप्त हुआ है। **बंगाली के प्रारंभिक साहित्य को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है—**

1. संस्कृत महाकाव्यों के अनुवाद, मंगलकाव्य और भक्ति साहित्य जैसे— गौड़ीय वैष्णव आंदोलन के नेता श्री चैतन्य देव की जीवनियाँ आदि शामिल हैं।

2. नाथ साहित्य जैसे— मैनामती-गोपीचंद्र के गीत, धर्म ठाकुर की पूजा से संबंधित कहानियाँ, परीकथाएँ, लोककथाएँ और गाथागीत।

पहली श्रेणी के ग्रंथों का काल निर्धारण करना सरल है, क्योंकि अनेक पाण्डुलिपियों से पता चलता है कि उनकी रचना 15वीं सदी से 18वीं सदी के मध्य की गई थी।

दूसरी श्रेणी की कृतियाँ मौखिक रूप से कही-सुनी जाने के कारण इसका काल निर्धारण सही-सही नहीं किया जा सकता है। वे खासतौर पर पूर्वी बंगाल में लोकप्रिय थीं, जहाँ ब्राह्मणों का प्रभाव अपेक्षाकृत कम था।

पीर और मंदिर

16वीं सदी से लोग पश्चिम बंगाल के क्षेत्रों को छोड़कर दक्षिण-पूर्वी बंगाल के जंगली तथा दलदली इलाकों में जंगलों को साफ़ करके भूमि में धान की खेती करने लगे। जनजातीय लोग किसान समुदायों में मिल गए।

➡ इन्हीं दिनों बंगाल पर मुग़लों ने नियंत्रण कर ढाका को अपनी राजधानी बनाई। अधिकारी और कर्मचारी लोग भूमि प्राप्त करके अक्सर उस पर मस्जिद बना लेते थे, जो इन इलाकों के धार्मिक रूपांतरण के केंद्रों के रूप में काम आती थीं।

- प्रारंभ में बाहर से आकर यहाँ बसने वाले लोगों को इन अस्थिर परिस्थितियों में सुख-सुविधाएँ और आश्वासन, समुदाय के नेताओं द्वारा दी गई।
- ये नेता शिक्षकों और निर्णायकों की भूमिका भी अदा करते थे। **लोगों को लगता था कि नेताओं के पास अलौकिक शक्तियाँ हैं। स्नेह और आदर से लोग इन्हें पीर कहा करते थे।**

Study Learning Notes
https://studylearningnotes.com

इस पीर श्रेणी में संत या सूफ़ी और अन्य धार्मिक महानुभाव, साहसी उपनिवेशी, देवत्व प्राप्त सैनिक एवं योद्धा, विभिन्न हिंदू एवं बौद्ध देवी-देवता और यहाँ तक कि जीवात्माएँ भी शामिल थे। पीरों की पूजा पद्धतियाँ बहुत ही लोकप्रिय हो गईं और उनकी मज़ारें बंगाल में हर जगह पाई जाने लगी।

➡ **बंगाल में 15वीं सदी से 19वीं सदी तक मंदिर बनाने का दौर ज़ोरों पर रहा।** मंदिर और अन्य धार्मिक भवन अकसर शक्तिशाली समूहों द्वारा बनवाए जाते थे। वे इनके माध्यम से अपनी शक्ति तथा भक्तिभाव का प्रदर्शन करना चाहते थे।

बंगाल में साधारण ईंटों और मिट्टी-गारे से अनेक मंदिर निम्न सामाजिक समूहों जैसे कालू (तेली), कंसारी (घंटा धातु के कारीगर) आदि के समर्थन से बने थे।

➡ लोगों की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति सुधरने पर, उन्होंने स्मारकों के निर्माण के माध्यम से अपनी प्रतिष्ठा की घोषणा कर दी।

- स्थानीय देवी-देवता, जो पहले गाँवों में छान-छप्पर वाली झोपड़ियों में पूजे जाते थे, को ब्राह्मणों द्वारा मान्यता प्रदान करने पर उनकी प्रतिमाएँ मंदिरों में स्थापित की जाने लगीं।
- इन मंदिरों की शक्ल या आकृति बंगाल की छप्परदार झोपड़ियों की तरह **दोचाला (दो छतों वाली) या चौचाला (चार छतों वाली)** होती थी। इसके कारण मंदिरों की स्थापत्य कला में विशिष्ट बंगाली शैली का प्रादुर्भाव हुआ।

मंदिर आमतौर पर एक वर्गाकार चबूतरे पर बनाए जाते थे। उनके भीतरी भाग में कोई सजावट नहीं होती थी, लेकिन अनेक मंदिरों की बड़ी दीवारें चित्रकारियों, सजावटी टाइलों अथवा मिट्टी की पट्टियों से सजी होती थीं। विष्णुपुर के मंदिरों में (पश्चिम बंगाल के बांकुरा ज़िले में) ऐसी सजावटें अत्यंत उत्कृष्ट कोटि तक पहुँच चुकी थीं।

Study Learning Notes
https://studylearningnotes.com

मछली, भोजन के रूप में

बंगाल एक नदीय मैदान है, जहाँ मछली और धान की उपज ज़्यादा होती है। मछली पकड़ना वहाँ का प्रमुख धंधा रहा है और बंगाली साहित्य में मछली का स्थान-स्थान पर उल्लेख मिलता है।

➡ मंदिरों और बौद्ध विहारों की दीवारों पर जो मिट्टी की पट्टियाँ लगी हैं, उनमें भी मछलियों को साफ़ करते हुए और टोकरियों में भरकर बाज़ार ले जाते हुए दर्शाया गया है।

- ब्राह्मणों को सामिष भोजन करने की अनुमति नहीं थी, लेकिन स्थानीय आहार में मछली की लोकप्रियता को देखते हुए ब्राह्मण धर्म के विशेषज्ञों ने बंगाली ब्राह्मणों के लिए इस निषेध में ढील दे दी।
- **बंगाल में रचित 13वीं सदी का संस्कृत ग्रंथ बृहद्धर्म पुराण, ने स्थानीय ब्राह्मणों को कुछ खास किस्मों की मछली खाने की अनुमति दे दी।**

Study Learning Notes

https://studylearningnotes.com

studylearningnotes.com